सौन्दर्य के उपासक

गजानन माधव मुक्तिबोध

सौन्दर्य के उपासक

कोमल तृणों के उरस्थल पर मेघों के प्रेमाश्रु बिखरे पड़े थे। रवि की सांध्य किरणें उन मृदुल-स्पन्दित तृणों के उरों में न मालूम किसे खोज रही थी। मैं चुपचाप खड़ा था। बायाँ हाथ 'उसके' बाएँ कन्धे पर। कभी निसर्ग-देवता की इस रम्य कल्पना की ओर तो कभी मेरी प्रणयिनी के श्रम-जल-सिक्त सुन्दर मुख पर दृष्टिक्षेप करता हुआ न मालूम किस उत्ताल-तरंगित जलधि में गोते खा रहा था। सहसा मेरी स्थिति पर मेरा

https://www.hindiadda.com/saun%e2%80%8ddary-ke-upasak/

ध्यान गया। आसपास देखा कोई नहीं था। चिड़ियाँ वृक्षों पर 'किल बिल' 'किल बिल' कर रही थी। मैंने उसकी पीठ पर कोमल थपकी देकर उसका ध्यान अपनी ओर खींचा। वह शुचि स्मिता रमणी मेरी ओर किंचित हँस दी।

मैंने मौन तोड़ने के लिए कहा, 'देखो, अनिल, कैसी मनोहर है प्रकृति की शोभा।'

वह 'हूँ' कहकर मुसकुरा दी। 'अनिल, क्या तुम सौन्दर्य की उपासिका नहीं! अनिल, बोलो न !' मैंने विव्हल होकर पूछा। 'क्यों नहीं ! प्रमोद, मैं सौन्दर्य की उपासिका तो हूँ पर उसी सौन्दर्य के हृदय की भी। प्रमोद, घबराओ ना। मैं सोच रही थी कि यह निसर्ग देवी किसके लिए इतना रम्य, पवित्र, श्रृंगार किए बैठी हैं ! कौन है वह सौभाग्यशाली पुरूष ! प्रमोद, मैं सौन्दर्य की उपासिका हूँ, मैं प्रेम की उपासिका हूँ।'

1. 'तो क्या मैं तुमसे प्रेम नहीं करता ! तुम मुझे समझती क्या हो। सच-सच बतला दो, अनिल।'

'मैं ! तुम्हें ! मेरे देवता, मेरे ध्येय, मेरी मुक्ति। मैं तुम्हें मेरा सब कुछ समझती हूँ प्रमोद।'

मैं खिल गया, मैंने उत्साहित होकर पूछा, 'तो क्या मैं सौन्दर्य का उपासक नहीं?'

वह मेरे उरस्थल पर नशीली आँखें गड़ाती हुई समीपस्थ वृक्ष पर टिक गयी। अँधेरा हो चुका था।

2. मैं दूसरे मंजिल पर था, और वह मेरे पीछे-एक हाथ मेरे कन्धे पर और दूसरा सिर पर। सिर के बालों को सहलाती हुई, कुछ गुनगुनाती हुई खड़ी थी। मैं तन्मय होकर 'हैपिनेस इन मैरिज' नामक पुस्तक पढ़ रहा था। सहसा उसका हाथ मेरी आँखों पर से फिर गया। मैंने उसे पकड़ लिया। अपनी नशीली आँखें मुख पर दौड़ाती हुई अस्तव्यस्त हो अपना सारा भार मेरी कुर्सी के हत्थों पर डाल दिया। मैं कुर्सी को टेकता सीधा हो गया। साहसा घर डोल गया और एक...

3. उसका हृदय मेरे हृदय से मिल गया था।

4. भूकम्प क्या था - प्रलय का दूसरा रूप। भाग्य से ही हम बचे। हम अच्छे हो चुके थे। वैसी ही सन्ध्या थी। वह मेरे पास आयी। सामने की कुर्सी पर बैठ गयी। उसकी आँखों में प्रेम था, पवित्रता थी। बोली- 'प्रमोद, मैं एक बात तुम से पूछूँ?' मैंने उसका कोमल हाथ अपने हाथ में लेते हुए कहा, 'मेरे लिए इससे अधिक प्रसन्नता की बात और क्या

हो सकती है, अनिल।' वह बोली, 'प्रमोद, तुम जानते हो देश कैसा दुखी है, त्रस्त है। हम अच्छे हो गये हैं। हमारा उपयोग होना चाहिए, प्रमोद।' मैं फूट पड़ा।

'तुम्हारा हृदय कितना उच्च है, कितनी सहानुभति से भरा है अनिल। हम कवि लोग अपनी भावनाओं को ही घूमाने-फिराने में लगे रहते हैं। क्या किसी कवि को तुमने कार्य-कवि होते भी देखा है। होते भी होंगे पर बहुत कम। हमारी कल्पनाएँ क्या भूकम्प त्रस्त लोगों को कुछ भी सुख पहुँचा सकती हैं। नहीं, अनिल, नहीं।'

'प्रमोद, शान्त हो। तुम नहीं, मैं तो हूँ। मुझे आज्ञा दो प्रमोद, कि मैं विश्व-सेवा में उपस्थित होऊँ।'

वह एकदम खड़ी हो गयी। मैं भी एकदम खड़ा हो गया। मैंने आवेश से कहा- 'अनिल जाओ। मैं नहीं आ सकता - तुम जाओ। मेरी हृदय-कामने, तुम जाओ।'

'जाती हूँ, प्रमोद। तुम सच्चे कवि हो। तुम मेरे सच्चे हृदयेश्वर हो। और हो तुम सौन्दर्य के सच्चे उपासक-प्रमोद यही सौन्दर्य है।'

उस दिन की स्मृति दौड़ती हुई आयी। मैंने अपने को स्वर्ग में पाया। पुलकित हो गया। समय और स्थिति की परवाह न कर मैंने उसे हृदय से चिपका लिया। ऑखों में अश्रु थे और अधरों पर सुधा।

यह था मेरा प्रथम प्रणय-चुम्बन।

(माधव कॉलेज मैगजीन में 1935 में तथा 27 दिसंबर 1992 के दैनिक भास्कर में पुनः प्रकाशित)

स्रोत : शेष-अशेष, संपादक : अशोक वाजपेयी, रमेश गजानन मुक्तिबोध, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली

https://www.hindiadda.com/saun%e2%80%8ddary-ke-upasak/